



जौ का महत्व एवं उत्तर पर्वतीय क्षेत्रों के लिए जौ की प्रजातियाँ

मधु पटियाल¹, संतोष कुमार बिश्नोई² एवं अंजना ठाकुर³

¹भा.कृ.अनु.प-भा.कृ.अ.सं, क्षेत्रीय केंद्र शिमला

²भा.कृ.अनु.प-आई आई डब्लू बी आर, करनाल

³सी एस के एच पी के वी, पालमपुर

लेखक का मेल: mcaquarian@gmail.com

जौ विश्व के सबसे पुराने अनाजों में से एक है जिसकी खेती- खाद्यान, हरे चारे व माल्ट की फसल के रूप में की जा रही है। यह अनाज फसलों में चौथे स्थान पर आती है और विश्व के अनाज उत्पादन में 7 प्रतिशत का सहयोग देती है। भारत में उत्तरी मैदानी और उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी खेती सर्दियों (रबी) के मौसम के दौरान एक महत्वपूर्ण खाद्य फसल के रूप में की जाती है। पर्वतीय राज्यों के अत्यधिक ऊँचाई वाले इलाकों में जौ की खेती गर्मियों में भी की जाती है। जौ की खेती से किसान अपने भोजन, पेय प्रदार्थ और पशुओं के हरे चारे की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। देश के किसानों के लिए पशुपालन एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, पर सर्दियों के मौसम में चारे की उपलब्धता किसानों के लिए एक बड़ी समस्या है और साथ ही जलवायु परिवर्तन की वजह से सूखा एक भयंकर समस्या बनता जा रहा है। परिणामस्वरूप किसान जई जैसी चारा फसलों (जिन्हें पानी की आवश्यकता होती है) को छोड़कर अन्य फसल विशेषकर जौ की तरफ अग्रसर हो रहे हैं।

गुणवत्ता की दृष्टि से गेहूँ की अपेक्षा जौ हलका धान्य है। मधुमेह के रोगी को जौ का आटा अधिक अनुकूल रहता है। जौ खाद्यान में- बीटा ग्लूकॉन की अधिकता और ग्लूटेन की न्यूनता जहाँ एक ओर मानव रक्त में कोलेस्ट्रॉल स्तर को कम करता है, वही दूसरी ओर सुपाच्यता व शीतलता प्रदान करता है। इसके सेवन से पेट संबंधी गड़बड़ी, गुर्दे में पथरी बनना, आंतों की गड़बड़िया तथा याददाश्त की समस्या दूर होती है। इसके सेवन से शरीर में शक्कर की मात्रा बढ़ती नहीं है। इसमें एंटी कोलेस्ट्रॉल तत्व भी पाया जाता है। जिसकी चरबी बढ़ गयी हो वह अगर गेहूँ और चावल छोड़कर जौ की रोटी एवं बथुए की या मेथी की भाजी तथा साथ में छाछ का सेवन करे तो धीरे-धीरे चरबी की मात्रा कम हो जाती है। जौ मूत्रल (मूत्र लाने वाला) पदार्थ हैं अतः इन्हें खाने से मूत्र खुलकर आता है। अगर ब्लड प्रेशर की शिकायत हो तो जौ को खाना चाहिए। हाल ही में हुए एक अध्ययन में दावा किया गया है कि जौ से ब्लड प्रेशर कंट्रोल होता (जौ का



छिलका ब्लड प्रेशर से बहुत ही कारगर तरीके से लड़ता है)।

जौ की खेती का महत्त्व:

खेती में विविधता स्थाई कृषि का एक पहलू है। मोनोकल्चर खेती में एक प्रकार की फसलों को अपनाकर किसानों को आर्थिक नुकसान होने की संभावना बढ़ जाती है। खेत में फसलों की विविधता बहुत अहम है जो जलवायु परिवर्तन के दौरान फसलों में होने वाले नुकसान को कम कर सकती है। जौ, फसल विविधता के लिए एक शानदार बहुमुखी अनाज है।

1. जौ की खेती करने के लिए अन्य फसलों की अपेक्षा कम खर्च आता है क्योंकि इसमें सिंचाई व उर्वरकों पर लगने वाली लागत बहुत कम है।
2. सूखाग्रस्त क्षेत्रों, हल्की लवणीय व क्षारीय मृदा तथा कम उपजाऊ भूमि पर भी इसकी खेती संभव है। पर्वतीय क्षेत्र जहाँ 87 प्रतिशत भूमि वर्षा पर आधारित है, में इसकी खेती करना सार्थक है।
3. दक्षिणी-पूर्वी एशियाई देशों में बियर तथा अन्य माल्ट पर आधारित पेय की मांग बढ़ती जा रही है, इसलिए माल्ट पर आधारित कारखानों के लिए जौ की आपूर्ति करने के लिए इसकी खेती करना लाभदायक सिद्ध हो सकता है। लेकिन ऐसा तभी संभव होगा जब माल्ट पर आधारित कारखानों के मालिकों का जौ उत्पादक किसानों के साथ इस तरह के

करार किये जाएँ ताकि किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त हो सके।

4. जौ, गेहूँ की फसल से 10 से 15 दिन पहले पक कर तैयार हो जाती है जिससे भविष्य में अन्य फसल जल्दी लगाई जा सकती है।
5. बीटाग्लूकॉन, ग्लूटेन तत्व की न्यूनता, विलयशील रेशे व विटामिन्स की प्रचुरता के कारण कोलेस्ट्रॉल, रक्तचाप, पेट, पथरी, पेशाब संबंधी रोग, लकवा व याददाशत की कमी में जौ बहुत उपयोगी पाई गई है। इसका प्रयोग आर्थराइटिस (जोड़ों के दर्द) के रोगियों के लिए भी हितकर बताया गया है।
6. पहाड़ी राज्यों के अत्याधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में सर्दियों के दिनों में पशुओं के लिए हरा चारा उपलब्ध करवाना एक विकट समस्या है। ऐसी परिस्थितियों से निपटने के लिए जौ की खेती करना अत्यंत लाभकारी होगा। इन क्षेत्रों के किसानों को अधिक चारा व दाना देने वाली प्रजातियाँ उपलब्ध कराने के प्रयास किए जाने चाहिए ताकि लोगों को इस समस्या से राहत मिल सके।

जौ आधारित फसल प्रणाली

- जौ मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, मध्य प्रदेश, हरियाणा, बिहार, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल और जम्मू कश्मीर में उगाया जाता है।



- जौ मुख्य रूप से बलुई दोमट, दोमट और मध्यम मिट्टी में उगाया जाता है।
- दोमट मिट्टी में खरीफ की दालों जैसे मूंग, उर्द, मक्का के बाद जौ की खेती की जा सकती है
- मध्यम से भारी मिट्टी में सोयाबीन, उड़द, मूंगफली, मक्का, के बाद जौ लगाया जाता है।
- कुछ क्षेत्रों में चावल के बाद भी जौ लगाया जाता है।
- जौ को अनाज-अनाज के चक्र में उगाया जाता है जैसे मक्का-जौ, ज्वार-जौ, बाजरा-जौ, चावल-जौ। ऐसी फसल प्रणाली में पोषक तत्वों का निष्कासन केवल मिट्टी की ऊपरी परत यानी 6" गहराई वाली मिट्टी से होता है। यदि इस तरह की फसल प्रणाली का लंबे समय तक पालन किया जाता है, तो यह पोषक तत्वों की कमी पैदा करता है।
- फली आधारित फसल प्रणाली, प्रयुक्त उर्वरकों के उचित और कुशल उपयोग में मदद करती है। कुछ फसल चक्रों में यह देखा गया है कि यदि खरीफ फलीदार फसल के दौरान फास्फोरस का प्रयोग किया जाता है तो जौ की फसल में फास्फोरस लगाने की आवश्यकता नहीं होती है।

जौ की उन्नत खेती के लिए विभिन्न शस्य क्रियाएं

बिजाई का समय	मध्य अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह ।
भूमि	अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि सर्वोत्तम है पर कमज़ोर रेतीली और बरनी क्षेत्रों में थोड़ी सी वर्षा में भी यह सफलतापूर्वक उगाई जाती है ।
बीज मात्रा	100 कि.ग्रा./है. (8 कि.ग्रा./बीघा) । असिंचित व पछेती बिजाई की स्थिति में 20-25 कि.ग्रा./है. बीज अधिक डालें ।
दूरी	केरा प्रणाली से कतारों में 22 सी. मी. की दूरी पर बिजाई करें ।
खाद एवं उर्वरक	नत्रजन 40 कि.ग्रा./है. और फॉस्फोरस 20 कि.ग्रा./है. (नत्रजन की आधी मात्रा बुआई के समय और बाकि 4-5 सप्ताह के बाद डालें)।

उत्तर पर्वतीय क्षेत्रों के लिए जौ की अनुशंसित प्रजातियाँ

हरित क्रान्ति के बावजूद किसानों के कृषि सम्बन्धी समस्याओं का समाधान नहीं किया जा सका है। भारतवर्ष में खाद्य सुरक्षा को बनाये रखने के लिए कृषि में ऐसी नई प्रजातियों के विकास पर बल दिया जा रहा है

जो मौसम के उतार-चढ़ाव, कम पानी, एवं समस्याग्रस्त क्षेत्रों में भरपूर उत्पादन दे सकें। इसके अतिरिक्त इस बात पर भी विशेष बल दिया जा रहा है कि पुरानी प्रजातियों में आनुवंशिकी विकास करके नई प्रजातियाँ निकाली जाए। विभिन्न अनुसंधान संस्थानों द्वारा जौ के सुधार हेतु शोध कार्य किए जा



रहे हैं। इन संस्थानों द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों के लिए उपयुक्त प्रजातियाँ विकसित की हैं जिनका उपयोग करके क्षेत्र के किसान लाभ उठा सकते हैं।

सारणी: उत्तर पर्वतीय क्षेत्रों के लिए जौ की अनुशंसित प्रजातियाँ

उपयोग	प्रजातियाँ
अन्न वाली जौ	बी एच एस 352, बी एच एस 400, एच बी एल 713, एच बी एल 276, वी एल बी 118
द्विउपयोगी (हरा चारा व अन्न)	बी एच एस 380

हिमाद्री (बी एच एस 352)

अनुमोदित वर्ष	2003 में फसल मानकों पर केंद्रीय उप समिति द्वारा जारी
बुवाई	उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों में कम बारिशों पर समय से बिजाई
रोग प्रतिरोधन	भूरे व पीले रतुए के लिए प्रतिरोधी तथा पत्ती धारी,

विशेष गुण

हरा चारा व दाने के लिए उपयोगी, कटाई के बाद फिर से जल्दी बढ़ना और दानों की उपज में कम प्रभाव होना आदि गुणों से भरपूर।

अन्य गुण

भूरे वह पीले रतुए के लिए रोगरोधिता और झुलसा व चूर्णी फफूंद को सहन करने की क्षमता

हरे चारे की कटाई की पहली गांठ आने की दशा या बुआई के 70-75 दिनोपरान्त।

उपयुक्त अवस्था

फूल आने का समय

बिजाई से औसतन 130 दिनोपरान्त।

नैट बलाच व चूर्णी फफूंदी को सहन करने की क्षमता रखती है

फूल आने का समय बिजाई से औसतन 136 दिनोप्रांत

परिपक्वता दिन बिजाई से औसतन 173 दिनोप्रांत

विशेष गुण भुसीरहित

दो / छह पंक्ति छह पंक्ति

ऊंचाई औसतन 77 से. मी.

गुणवत्ता प्रोटीन की मात्रा 9.2

विशेषताएँ

औसत उपज 22 क्विंटल प्रति हैक्टेयर

पूसा लोसर (बी एच एस 380)

वर्ष 2010 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (क्षेत्रीय केंद्र, टुटीकंडी), शिमला, हिमाचल प्रदेश द्वारा जौ की द्विउपयोगी प्रजाती, पूसा लोसर (बी एच एस 380) क्षेत्र के किसानों की आवश्यकता को देखते हुए विकसित की गई है।
पूसा लोसर (बी एच एस 380) के विशेष गुण इस प्रकार हैं:



परिपक्वता दिन बिजाई से औसतन 182 दिनोपरान्त ।
दो / छह पंक्ति छह पंक्ति

ऊंचाई औसतन 60 से. मी.
औसत उपज (हरा चारा) 60 क्विंटल प्रति हैक्टेयर
औसत उपज (दाना) 21 क्विंटल प्रति हैक्टेयर

पूसा शीतल (बी एच एस - 400)

पूसा शीतल (बी एच एस 400) जौ की नवीनतम प्रजाती है जो कम उपज और रतुए से ग्रस्ति पुरानी किस्मों का एक उत्कृष्ट प्रतिस्थापन है । पूसा शीतल (बी एच एस - 400) के विशेष गुण

अनुमोदित वर्ष 2014 में फसल मानकों पर केंद्रीय उप समिति द्वारा जारी
बुवाई उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों में कम बारिशों पर समय से बिजाई
रोग प्रतिरोधन पीला रतुआ रोग सहिष्णुता
फूल आने का समय बिजाई से औसतन 124 दिनोपरान्त ।

परिपक्वता दिन बिजाई से औसतन 168 दिनोपरान्त ।

दो / छह पंक्ति छह पंक्ति
ऊंचाई औसतन 83 से. मी.
गुणवत्ता प्रोटीन की मात्रा 9.2
विशेषताएँ

औसत उपज 32.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर

अगर प्रदेश के किसान अनुमोदित उन्नत किस्मों का इस्तेमाल करें और वैज्ञानिक ढंग से खेती करें तो प्रदेश में जौ की पैदावार निश्चित रूप से बढ़ जाएगी।